**International Journal of Research in Hindi**
www.hindijournal.in
ISSN: 2582-3493
Received: 23-06-2019; Accepted: 22-07-2019; Publsihed: 28-07-2019
Volume 1; Issue 1; 2019; Page No. 01-03

# अध्यात्म में काम का स्वरूप

**राजकुमार [1], नागेन्द्र नागर [2]**
[1] असिस्टेंट प्रोफेसर (अस्थायी) संस्कृत विभाग, बी0 एस0 ए0 कॉलेज, मथुरा, उत्तर प्रदेश, भारत
[2] एसोसियट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,बी0एस0ए0 कॉलेज, मथुरा, उत्तर प्रदेश, भारत

**प्रस्तावना**

'काम' शब्द का शाब्दिक अर्थ है कामना; जो सृष्टि प्रक्रिया का अत्यन्त महत्वपूर्ण तत्त्व है।यह सृष्टि–प्रक्रिया के आरम्भ का तत्त्व है और इसके अभाव में सम्पूर्ण बृह्माण्ड की सृष्टि सम्भव नहीं है। सृष्टि के आरम्भ में जब ब्रह्मा जी के द्वारा रची गयी दैवीय सृष्टि वृद्धि को न प्राप्त हुई तब ब्रह्माजी सोच में पड़ गये और उसी समय ब्रह्माजी के हृदय से उनके समक्ष एक अद्भुत पुरुष प्रकट हुआ।वह तपे हुये स्वर्ण के समान कान्तिधारी,मोटे वक्ष स्थल वाला,उत्तम नासिका वाला,पूर्ण चन्द्र के समान मुख,उर जंघों से युक्त,श्याम गज के समान आकार वाला, उत्तम सगन्धियों से युक्त और रक्त वर्ण के हाथ–पैर, तिरछे नयनों वाला,पंच पुष्पायुध,शीघ्रगामी पुष्प के धनुष से सुशोभित और श्रृंगार रस से सेवित प्रकट हुआ।उसके प्रकट होते ही ब्रह्माजी के दक्षादि समस्त पुत्रों का चित्त विकृत हो गया। वह पुरुष ब्रह्मा जी से बोला हे ब्रह्मन! मैं क्या करूँ ? मुझे ऐसे कर्म में लगाइये जिससे मैं पुरुषों में प्रसिद्ध हूँ। काम के इस वचन को सुनकर ब्रह्मा जी चकित हो गये और कुछ देर तक कुछ न बोले। फिर मन को सावधान कर विस्मय को छोड़कर को अपने समीप बुलाकर बोले–अनेन त्वं सवरूपेपापुष्पबाणैश्च पंचभिः।मोहयन्पुरुषान् स्त्रीश्च कुरु सृष्टिं सनातनीम।। अस्मिञ्जीवाश्च देवाद्यास्त्रैलोक्ये सचराचरे।एते सर्वे भविष्यन्ति न क्षमास्त्यवलंबने।। त्वत्पुष्प बाणस्य सदा सुखलक्ष्यं मनोद्भतम्।सर्वेषां प्राणिनां नित्यं सदा मद करो भवान्। इति ते कर्म कथितं सृष्टि प्रावर्तकं पुनः। नामन्येते वदिष्यन्ति सुता मे तव तत्वतः।।[1] अर्थात् तुम अपने रूप और पाँच बाणों से पुरुष और स्त्रियों को मोहित करते हुये सृष्टि करो।तुम्हारे सन्मुख त्रिलोक में कोई भी न ठहर सकेगा। मैं,नारायण और शिवजी भी तुम्हारे वश में होंगे अन्य जीवों की तो बात ही क्या है ? गुप्त रूप तुम सर्वदा प्राणधारियों के हृदय में प्रवेष करते हुये सुख रूप होकर सनातनी सृष्टि करो। सदा तुम्हारे पुष्प बाण मन को आष्चर्य देने वाले,सुख रूपी लक्ष्य,सब प्राणियों को नित्य मद देने वाले होंगे। यह सृष्टि चलाने वाला कर्म मैंने तुमसे कहा फिर यह मेरे पुत्र वास्तव में तुम्हारे नाम कहेंगे।

फिर उसके अभिप्राय को जानने वपाले मरीच्यादिकों ने दूसरो से उसका वृतांत जान उसका मुख देखते ही स्थान और स्त्री को उसे दे दिया। ऋषि बोले जो तुमने पहले ही हमारा और ब्रह्मा जी का चित्त मथा इससे संसार में तुम्हारा नाम मन्मथ होगा। संसार में तुम्हारे समान कोई सुन्दर नहीं इससे तुम्हारा नाम काम भी होगा। मोहन से मदन, अहंकार से अहंकारी कंदर्प ही होगा। तुम्हारे समान किसी देवता में पराक्रम न होगा, इससे आपके सब स्थान और आप सर्वव्यापी होंगे। पुरुषोत्तम प्रजाओं के स्वामी दक्ष यथेष्ट कामिनी ही आपको देंगे।यह ब्रह्मा जी के मन से उत्पन्न सुन्दरी संसार में सन्ध्या नाम वाली होगी। ब्रह्मा जी बोले–कौसुमानि तथास्त्राणि पंचादाय मनोभवः।प्रच्छरूपी तत्रेव चिन्तयामास निष्चयम्।। हर्षणं राचनाख्यं च मोहन ष्षोषण तथा। मारणं चेति प्रोक्तानि मुनेर्मोहकराण्यपि।। ब्रह्मणा मम यत्कर्म समुद्दिष्टं सनातनम्। तदिहैव करिष्यामि मुनीनां सन्निधौ विधे।तिष्ठन्ति मुनयाश्चात्र स्वयं चापि प्रजापतिः एतेषां साक्षिभूतं मे भविष्यंत्यद्य निष्चयम्।। सन्ध्यापि ब्रह्मणा प्रोक्ता चेदानीं प्रेषयेद्वचः।इह कर्म परीक्ष्यैव प्रयोगान्मोहयाम्यहम्।।इति संचित्य मनसा निश्चित्यस च मनोभवः।पुष्पजं पुष्पजातस्य योजयामास मार्गणैः।।आलीढस्थानमासाद्य धनुराकृष्य यत्नतः। चकार बलयाकारं कामो धन्विवरस्तदा।संहिते तेन कोदंडे मारुताश्च सुगन्ध्यः।व बुस्तत्रश्मुनिश्रेष्ठ सम्ययगाहन्नदकारिणः। ।ततस्तानचि धात्रदीन् सर्वानेव च मानसान्।पृथक् पुष्पषरस्तीक्षणैर्मोहयामास मोहनः। ततस्ते मुनयस्सर्वे मोहिताश्चाप्यहं मुने।संहितो मनसा कंचिद्विकारं प्रापुरादितः।।सन्ध्यां सर्वे निरीक्षंतस्सविकारं मुहुर्मुहः। आसन प्रवृद्धमदनाःस्त्री यस्मान्मदनैधिनी वीक्ष्याहं स यदा च ताम्। तदैव चो न पंचाषद्भावा जाताश्शरीरतः।।सापि तैर्वीक्ष्यमाणथ कंदर्पशरपातनात्।चक्रे मुहर्मुहर्भावान्कटाक्षवरणादिकान्। निसर्गसुन्दरी सन्ध्या तान्भावान् मानसोद्भवान्।कुर्वत्यतितरां रेजे स्वर्णदीप तनुभिः।अथ भावयुतां सन्ध्यां वीक्ष्याकर्ष प्रजापतिः। धमाभिपूरित तनुरभिलाषमहंमुने। ततस्ते मुनयस्सर्वे मरीच्य त्रिमुख अपि।दक्षाद्याष्च द्विजश्रेष्ठ प्रापुवैकारिकेन्द्रि कर्म ममोदिष्टं ममापि तत्।कर्तु श्शक्यमितिह्यद्धा भावितु स्वभुवा तदा।।[2] गुप्त रूप कामदेव पुष्प रूपी पाँच अस्त्र लेकर वही सेचने लगा।रोचन,हर्षण,मोहन, षोषण और मारण यह पाँच बाण मुनियों के चित्त को मोहित करने वाले हैं।जो कर्म ब्रह्मा जी ने मुझे सौंपा है,उसकी परीक्षा मुनियों के समीप इसी समय अभी क्यों न कर लूँ ? यहाँ बहुत से ऋषि और साक्षात् प्रजापति विराजमान हैं, इनके सामने कर्म की सत्यता की जांच हो जायगी। येसा निष्चय कर काम ने धनुष को चलाया। इससे सुगन्धित वायु चलने लगी। फिर काम ने अलग–अलग तेज पुष्प बाणों से ब्रह्मादिक समस्त मुनि मोहित हो गये और सब मिलकर विकार को प्राप्त हुये। उस काम ने बार बार उन सबको मोहित करके उनमे इन्द्रिय विकार पैदा कर दिया। उसे देख उठी इन्द्रिय वाले ब्रह्मा के षरीर से एकोनपंचाशत् भाव उत्पन्न हुये। काम रूपी बाण के गिरने से उन लोगों से देखती हुई कटाक्ष रूपी आवरणों को करती हुई सन्ध्या ने मन से उत्पन्न उन भावों को शरीर की दीप्ति से बढ़ा दिया। धर्म से व्याप्त षरीर वाले प्रजापति ने भाव युक्त सन्ध्या को देखकर उसमें अभिलाषा की। फिर मरीच्यादिक और दक्षादिक इन्द्रियों को प्राप्त हो गये। इस प्रकार मरीच्यादिकों को और सन्ध्या को देख काम ने अपने कार्य में विश्वास कर लिया कि ब्रह्मा जी ने मुझे जो कर्म सौंपे उन्हें करने में मैं समर्थ हुआ। यह कामदेव देवराज इन्द्र की मायावी सेना का सबसे बड़ा योद्धा है तथा इसका उपयोग वे बड़े–बड़े तपस्वियों का तप भंग करने के लिये करते हैं। ऐसा ही उन्होंने नारद, विष्वामित्र आदि के साथ किया। एक बार नारद जी हिमालयकी परमषोभायमान गुफा में तप करने लग गये। नारद जी को तप करते देख इन्द्र से न रहा गया और उन्हें यह शंका हुई कि कहीं नारद जी

ब्रह्मा जी से मेरा राज्य न मांग लें। उन्होंने शीघ्र ही कामदेव का स्मरण किया, कामदेव वहीं तत्क्षण उपस्थित हो गया और उससे इन्द्र ने कहा–त्वद्वलान्मे बहूनाश्च तपोगर्वोविनाशितःमद्राज्यस्थिरता मित्र त्वदनुग्रहतस्सदा।। हिमशैलगुहायां हि मुनि स्तपति नारदः। मनसोद्दिष्यविष्वेषं महासंयम वान्दृढः।।याचेन्न विधितो राज्यं स ममेति विषंकितः। अद्यैवगच्छ तत्र त्वं तत्तपोविघ्नमाचर।। इत्याज्ञप्तो महेन्द्रेण स कामस्समधु प्रियः।जगाम तत्स्थलं गर्वादुपायं स्वष्चकारह। रचयामास तत्राषु स्वकलास्सकला अपि । बसंतोपिश्स्वप्रभावं चकार विविधंमदात।[3] हे मित्र!तुम्हारे ही बल से मैंने बहुतों कें तप को नष्ट कर दिया है और तुम्हारे ही अनुग्रह से मेरे राज्य में स्थिरता है।हिमालय पर्वत की गुफा में नारद जी तप कर रहे हैं, तुम अभी जाओ और उनके तप में विघ्न करो। इन्द्र की आज्ञा पाकर वह काम नारद जी के पास गया और अपना उद्योग करने लगा।उसने अपनी माया रची और बसन्त ने भी मद् से अपना अनेक प्रकार का प्रभाव दिखाया।कामदेव के सारे प्रयास असफल सिद्ध हुये।इसका कारण था कि पूर्वकाल में स्थान पर भगवान शिव ने कामदेव को अपने तृतीय नेत्र से भस्म किया था। इस कामदेव ने अपने भस्म होने का प्रतिशोध भगवान शंकर से समद्र मन्थन से निकले अमृत का मोहिनी द्वारा बंटबारा करते समय लिया और उन्हें अपने प्रभाव से उस मोहिनी के प्रति मोहित कर दिया–

तस्यासौपदवींरुद्रोविष्णोरद्भुतकर्मणः।
प्रत्यपद्यतकामेनवैरिणैवविनिर्जितः।।[4] अर्थात्–उस समय ऐसा प्रतीत होता था,मानो उनके शत्रु कामदेव ने इस समय उन पर विजय प्राप्त कर ली है।

अध्यात्म में इसे मन का विकार माना गया है।यह बृह्माण्ड के सारे प्राणियों में रजोगुण को प्रकट करके उन्हें इन्द्रिय विषयभोगों के कर्म में लगाता है।काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवः। महाषनो महापाप्मा विद्धयेनमहि वैरिणम्।।[5] यह काम जो सब लोगों का शत्रु है,जिसके निमित्त से जीवों को सब अनर्थों की प्राप्ति होती है, वही यह काम किसी कारण स बाधित होने पर क्रोध के रूप में बदल जाता है, इसलिये क्रोध भी यही है।यह रजोगुण का स्रोत है;क्योंकि यह रजोगुण को प्रकट करके पुरुष को कर्म में लगाया करता है। यह काम बहुत खाने वाला है इसलिये महापापी भी है; क्योंकि काम से प्रेरित हुआ जीव पाप किया करता है। जैसे प्रकाश स्वरूप अग्नि अपनें साथ उत्पन्न हुये अन्धकार रूप धूएँ से और दर्पण जैसे मैल से आच्छादित हो जाता है तथा जैसे गर्भ अपने आवरण स्वरूप जेर से आच्छादित हो जाता है वैसे ही इस काम से यह ज्ञान ढका हुआ है।[6] यह ज्ञान का वैरी है किन्तु आष्चर्य इस बात का है कि अतिदुर्बल व अन्तकाल के निकट पहुँचा मानव भी इसकी अकांक्षा करता है अर्थात् इसके वशीभूत होकर मनुष्य स्त्री के बाह्य सौन्दर्य को देखकर उसकी ओर आकर्षित होता है।[7]

राजा भर्तृहरि ने काम को सुन्दर स्त्रियों का दास कहा है–'नूनमाज्ञाकरस्तस्याः सुग्रवो मकरध्वजः यतस्तन्नेत्रसंचार सूचितेषु प्रवर्तते'[8] कामदेव सुन्दर स्त्रियों का आज्ञाकारी सेवक है क्योंकि जिस ओर वे अपनी आँख का इसारा कर देती हैं, वह उसी तरफ चल पड़ता है। आचार्य शंकर ने अपनी कृति सर्व वेदान्त सार संग्रह में इसे साक्षत् यम कहा है–'काम एव यमः साक्षात्कान्ता वैतरणी नदी'[9]। यह इन्द्र की दैवीय सेना का सबसे अधिक शक्तिशाली योद्धा है। देवराज को अपने स्वर्ग के शासन के छिन जाने का भय तपधारियों से हमेषा बना रहता है तथा उनकी तपस्या भंग करने के लिये अपनी अप्सराओं व कामदेव से उत्पन्न काम का प्रयोग करते हैं। एक बार भगवान शंकर अनन्त समय तक चलने वाली समाधि में लीन हो गये उधर स्वर्ग पर तारकासुर ने आक्रमण कर दिया और वह विजयी हो गया । उसे ब्रह्माजी द्वारा यह वरदान प्राप्त था कि वह केवल शिव पुत्र के हाथों से ही मारा जायेगा। भगवान शंकर की समाधि भंग करने के लिये इन्द्रादि समस्त देवताओ ने काम को बुलाया और उसे भगवान षंकर की समाधि भंग करने के लिये उनके समक्ष भेजा। काम के स्वरूप पर प्रकाश उालते हुये गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरितमाानस में लिखा है–

जे सजीव जग अचर चर नारि पुरुष अस नाम।ते निज निज मरजाद तजि भए सकल बस काम।। सबके हृदयँ मदन अभिलाषा।लता निहारि नबहिं तरु साखा।।नदी उमगि अंबुधि कहूँ धाईं।संगम करहिं तलाब तलाई।। जहँ असि दसाजडन्ह कै बरनी।को कौी सकइ सचेतन करनी।।पषु पच्छि नभ जल थल चारी।भये काम बस समय बिसारी।।मदन अंध व्याकुल सब लोका।निसि दिनु नहिं अवलोकहिं कोका।।देव दनुज नर किंनर ब्याला।प्रेत पिसाच भूत बेताला।।इन्ह कै दसा न कहेउँ बखानी।सदा काम के चेरे जानी।सिद्ध बिरक्त महामुनि जोगी।तेपि काम बस भए बियोगी।। भए कामबस जोगीस तापस पावँरन्हि की को कहै।देखहिं चराचर नारिमय जे ब्रह्ममय देखते रहे।।अबला बिलोकहिं पुरुषमय जगु पुरुष सब अबलामयं।दुइ दंड भरि ब्रह्मांड भीतर कामकृत कौतुक अयं।।[10]

अर्थात् –जब काम ने अपना प्रभाव फैलाया तब जगत् में स्त्री–पुरुष संज्ञा वाले जितने चर–अचर प्राणी थे, वे सब अपनी– अपनी मर्यादा छोड़कर काम के वषीभूत हो गये।सबके हृदय में काम की इच्छा हो गयी।लताओं को देखकर वृक्षों की डालियाँ झुकने लगीं।नदियाँ उमड़–उमड़कर समुद्र की ओर दौडीं ओर ताल–तलैया भी आपस में संगम करने लगे।जब जड़(वृक्ष नदी आदि )की यह दषा कही गयी है तब चेतन जीवों की करनी कौन कह सकता है ? आकाश जल और पृथ्वी पर विचरने वाले सारे पशु–पक्षी समय भुलाकर काम के वश हो गये। सब लोग कामान्ध होकर व्याकुल हो गये।चकवा–चकवी रात दिन नहीं देखते। देव, दैत्य, मनुष्य, किन्नर, सर्प, प्रेत, पिषाच, भूत, बेताल ये तो सदा ही काम के गुलाम हैं। सिद्ध, विरक्त, महामुनि ओर महान योगी भी काम के वश होकर योगरहित या स्त्री के विरही हो गये। जब योगीश्वर और तपस्वी भी काम के वश हो गये,तब साधारण मनुष्यों की क्या गति होगी ? कोई कह नहीं सकता,जो समस्त चराचर जगत को ब्रह्ममय देखते थे, वे अब उसे स्त्री मय देखने लगे।स्त्रियाँ सारे संसार को पुरुषमय देंखने लगीं और पुरुष उसे स्त्रीमय देखने लगे।दो घड़ी तक सारे ब्रह्माण्ड के अन्दर कामदेव का रचा हुआ यह तमाशा रहा। किसी ने भी हृदय में धैर्य धारण नहीं किया,कामदेव ने सबके मन हर लिये। ऐसा ही महर्षि विश्वामित्र के साथ हुआ जिसका विवरण महाभारत में मिलता है–एक बार महर्षि विश्वामित्र जी ने जंगल में कठिन तपस्या आरम्भ कर दी, जिससे देवराज इन्द्र घबरा गया। उसने तुरन्त ही मेनका को बुलाया और उससे कहा–हे मेनका सुनो!विश्वामित्र घोर तपस्या में संलग्न हैं,वे मेरे मन को कम्पित कर रहे हैं।मैं उनकी तपस्या भंग करने का भार तुम्हैं सौंप रहा हूँ। तुम उनके पास जाकर उन्हैं लुभाओ,उनकी तपस्या में विघ्न डालो। इन्द्र की आज्ञा शिरोधार्य कर वह महर्षि विश्वामित्र के पास गयी और उनके समक्ष भाँति–भाँति की क्रीडायें करने लगी ।

तस्या रूपगुणगान दृष्टास तु विप्रर्षभस्तदा।चकार भावं संसर्गात् तया कामवशं गतः।।[11] उसके रूप और गुणों को देखकर विप्रवर विश्वामित्र काम के अधीन हो गये।समपर्क में आने के कारण मेनका में उनका अनुराग हो गया।उन्होंने मेनका को अपने निकट आने का निमन्त्रण दिया।उनसे सम्बन्ध बनाने के लिये वह राजी हो गयी।तब वह मेनका काम और राग के वशीभूत हुये मुनि के समक्ष गयी। तदनन्तर वे दोनों वहाँ सयुदीर्घ काल तक इच्छानुसार विहार तथा रमण करते रहे।वह लम्बा समय उन्हें एक दिन के समान प्रतीत हुआ।काम के वशीभूत हो जाने के कारण उन महर्षि ने दीर्घकाल से उपार्जित की हुई तपस्या को नष्ट कर दिया।

अजानन् दाहात्मयं पततु ष्पलभज्ञतीव्रदहने स मीनोप्यज्ञाद् बडिषयुतमष्नातु पिषितम।विजानन्तोऽप्येते वयमहि विज्जालजटिलान् न मुंजामः कामानहह गहनो मोहमहिमा।।[12] अर्थात्–पतंगा यह जानते हुये भी कि यह दीपक की लौ मुझे जलाकर भस्म कर देगी,फिर भी जलकर

वह मरता है।मछली पानी में तैरता मांस का टुकड़ा देखकर उसकी ओर लपकती है,यह जानते हुए भी कि वह कांटे में फँस जायेगी। इसी प्रकार मनुष्य भी जान बूझकर काम वासनाओं के जाल में फंसता है। यह काम मछुआरे के समान षिकारी है जैसा कि श्रृंगार षतक में कहा गया है–विस्तारितं मकरकेतनधीवरेण स्त्रीसेज्ञितं बडिषमत्र भवाम्बुराषौ। येनचिरात् तदरामिषलोलमर्त्यमत्सयान्विकृष्य विपत्यनुरागवह्नौ' ।। [13] इस संसार रूपी सागर में कामदेव रूपी मछेरे ने ''स्त्री नामक मछली फांसने वाला जाल फैला रखा है।जिसमें स्त्री के होठ रूपी मांस के लालची मनुष्यों को को ललचाकर प्रेमाग्नि में भून डालता है। इस काम से मनुष्य कभी तृप्त नहीं हो सकता,यह कामरूप अग्नि नित्य का षत्रु है, इससे ज्ञानी का ज्ञान ढ़का हुआ है।[14]इन्द्रियाणि मनो बुद्धिरस्याधिष्ठामुच्यते। एतैर्विमोहयत्येष ज्ञानमावृत्य देहिनम्।।[15] इस काम के इन्द्रियाँ,मन और बुद्धि वास स्थान कहे जात हैं।यह काम इन मन, बुद्धि और इन्द्रियों के द्वारा ज्ञान को आच्छादित करके जीवात्मा को मोह में डालता है।काम का मूल निवास इन्द्रियों में होता है।इन्हीं इन्द्रियों से कर्म की प्रवृत्ति उत्पन्न होती। इसलिये सर्वप्रथम इन इन्द्रियों को ही अपने अधीन रखना चाहिये।ऐसा करने से मन की दौड़ बन्द हो जाती है, बुद्धि का छुटकारा हो जाता है और इन पापियों का आश्रय ही नष्ट हो जाता है।जिस समय यह अन्तः करण से निकाल दिया जाता है,उस समय निष्चय ही इसका पूर्ण रूप से सफाया हो जाता है जैसे सूर्य की रष्मियों के बिना मृग–जल नहीं होता, उसी प्रकार यह जान लेना चाहिये कि यदि काम–क्रोध आदि का नाश हो जाय ब्रह्मज्ञान का साम्राज्य स्वतः ही मिल जाता है और फिर जीव अपने आत्मानन्द में सुख पूर्वक रहता है।[16]

## निष्कर्ष

उपरोक्त दिये गये तथ्यों का विश्लेषण करने पर स्पष्ट होता है कि काम सृष्टि प्रक्रिया का आवश्यक तत्त्व है जो स्त्री व पुरुषों के मध्य एक दूसरे के प्रति आकर्षण पैदा करके उन्हें मोहित करता है और इसका आदि होने से जीवात्मा पापकर्म में प्रवृत्त होता है;जिसका दुष्परिणम भोगने के उसे चौरासी लाख यौनियों में भटकना पड़ता है।

## संदर्भ सूची


1. शिवमहापुराण(रुद्रसंहिता द्वितीय)2/40–42
2. शवमहापुराण(रुद्रसंहिता द्वितीय)3/1–29
3. शिवमहापुराण(रुद्रसंहिता प्रथम)2/11–17
4. श्रीमद्भागवत पुराण,9/12/31
5. श्रीमद्भगवद्गीता(शांकरभाष्य),3/37
6. श्रीमद्भगवद्गीता,3/38
7. अष्टावक्रगीता,3/7
8. भर्तृहरि श्रृंगार शतक से
9. सर्व वेदान्त सार संग्रह,53
10. श्रीरातचरितमानस बालकांड 1/84–85
11. महाभारत,आदिपर्व (सम्भव पर्व ),72/7
12. भर्तृहरि वैराग्य शतक से
13. भर्तृहरि श्रृंगार शतक से
14. गीतामाता,3/39
15. यथार्थगीता,3/40 16–श्री ज्ञानेश्वरी,3/41–43